Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 10 | ISSUE : 6 | JUNE 2024

प्राचीन भारत का आर्थिक भूगोल : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेंद्र सिंह परिहार [1]

[1] **अतिथि संकाय, हुआ देवी माना राम कॉलेज, मालवाड़ा (आर), न्यू एशिया कॉम्प्लेक्स के सामने, हाई स्कूल रोड, भीनमाल, जालौर (राजस्थान).**

ABSTRACT:

संपूर्ण जड़ जंगम सृष्टि विभिन्न प्रकार के पदार्थों से आवृत है जो एक जाल सृष्टि है भूगोल भूगोल का एक विनियोग पक्ष है, जिसके अन्तर्गत मनुष्य द्वारा सतत् विकासोन्मुख प्रक्रियाओं के अर्थ-प्रदत्त क्रिया-कलापों, तकनीक तथा उद्योगों, वन या आखेट जैसे प्राकृतिक सम्पदाओं का आर्थिक दोहन एवं संसाधनात्मक अध्ययन किया जाता है।

मानव दो प्रकार के क्रियाकलापों को सम्पन्न करता है। प्रथम वह अपने अस्तित्व को कायम रखते हुए संबंधित प्राकृतिक वातावरण से समायोजन की प्रक्रिया में सामंजस्य स्थापित करता है। भोजन प्राप्ति, आवास, वस्त्र, गमनागमन आदि ऐसे ही क्रियाकलापों के अंतर्गत आते हैं। दूसरा है मनुष्येतर आर्थिक क्रिया-कलाप। जब मानव अपनी अधार-भूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेता है तो वह अपने विकास हेतु कुछ अन्य कार्यों को सम्पादित करता है, जिसका लक्ष्य उसका अपना भौतिक संवर्द्धन करना ही नहीं, बल्कि कुछ लाभ अर्जित करना भी है। इन्हें ही आर्थिक क्रिया-कलाप कहा जाता है।

यह आर्थिक भूगोल प्राचीन ग्रंथों में चाहे वह किसी भी भाषा आदि से अंकित हो में व्याप्त हैं। जिसका सम्यक अनुशीलन आज भी अपेक्षित है। प्राचीन आर्थिक भूगोल वेत्ताओं के रूप में बृहस्पति, शुक्र, कामंदक, कौटिल्य, कालिदास, वाल्मीकि, व्यास मुनि, पाणिनि, मनु एवं पतंजलि आदि मनीषियों ने आर्थिक भूगोल के विकास में अपने विशिष्ट मतों को प्रस्तुत किया है। इन सभी विषय वेत्ताओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से साहित्य के कण-कण में व्याप्त आर्थिक भूगोल के प्राण तत्व का वर्णन करने का प्रयास किया जा रहा है।

KEYWORDS:

बृहस्पति, शुक्र, कामंदक, कौटिल्य, आर्थिक, भूगोल, अवधारणा।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
12th June 2024	14th June 2024

विषय प्रवेश

प्राचीन भारतीय साहित्य में भौगोलिक ज्ञान का अक्षय भण्डार छिपा है। भूगोल की विविध संकल्पनाएँ, जो भूगोलविदों के लिए विवेचना की वस्तु हैं, और पूर्णरूपेण प्राचीन साहित्य में समाहित हैं वह आज भी प्रासंगिक हैं। वर्तमान में प्राचीन साहित्य से जुड़े हुए आर्थिक भूगोल को सामने लाने के लिए विभिन्न प्रकार के अध्ययन निरंतर गतिशील है इस दिशा में अनेक भूगोलविद दिन रात प्रयासरत हैं।

मानव सभ्यता-संस्कृति की प्रारंभिक अवस्था में यद्यपि भूगोल की शाखाओं का विभाजन भौतिक, आर्थिक अथवा मानव भूगोल के रूप में नहीं हुआ था, किन्तु इस दौरान भी भौगोलिक ज्ञान का कोष खाली नहीं था और भूगोल की सभी शाखाओं से सम्बन्धित तथ्यों का विवेचन भारतीय मनिषियों द्वारा अपने-अपने ग्रन्थों में किया गया है। इन तथ्यों का अध्ययन एवम् विश्लेषण कर पाश्चात्य विद्वान (यूरोपीय एवम् अमेरिकी) विद्वान भी आश्चर्य चकित' हैं कि उस प्राचीन युग में जबकि अमेरिकी में तो मानव विकास का कोई नामो-निशान ही नहीं था और यूरोपीय देशों के निवासी भी गुफाओं में रहकर आदिम जिन्दगी व्यतीत करते थे. उस युग में भी आर्य भारतीय लोग विकसित नगरीय सभ्यता का जीवन व्यतीत करते थे तथा तत्कालीन भारतीय मनीषी उच्चकोटि के कृषक, शिल्पकार, व्यापारी एवम् अभियंता थे। इनके द्वारा किये गये कार्यों की पुष्टि न केवल ग्रन्थों में वर्णित तथ्यों से. बल्कि प्राप्त प्राचीन अवशेषों से भी हो जाती है।

देव गुरु बृहस्पति और भूगोल:

प्राचीन भारतीय आर्थिक भूगोल वेत्ताओं में आचार्य वृहस्पति का महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी विद्वता के कारण ही इन्हें 'देवगुरू' की उपाधि से विभूषित किया गया है। प्राप्त प्रमाणों के आधार पर आचार्य वृहस्पति को प्राचीन आर्थिक भूगोलवेत्ताओं में सबसे अग्रज माना जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

वृहस्पति ने मुख्य रूप से दो ग्रन्थों वृहस्पति सूत्र (बार्हस्पत्यम सूत्रम्), एवं वृहस्पति स्मृति की रचना की थी, जिनमें उनके आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित विचार भरे पड़े हैं।

वृहस्पति अर्थशास्त्र के नाम से जाने जाने वाले ग्रन्थ 'वृहस्पति सूत्र' के सन्दर्भ में डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल का भी कहना है कि, "बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र कौटिल्य के लिए भी प्राथमिक महत्व का ग्रन्थ था' यह ग्रन्थ आर्थिक एवम् राजनीतिक दोनों दृष्टियों से काफी महत्वपूर्ण है"। इसमें आचार्य वृहस्पति ने आर्थिक भूगोल से जुड़े अनेक तथ्यों का वर्णन किया है। वृहस्पति ने इस ग्रन्थ में राष्ट्र को तृतीय प्रकृति माना है और उनके राष्ट्र विषयक इन्हीं विचारों में आर्थिक भूगोल एवम् अर्थ व्यवस्था का छिपा हुआ स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। कारण कि समग्र आर्थिक व्यवस्था का स्वरूप ही राष्ट्र है। राष्ट्र को समुन्नत एवम् सुदृढ़ बनाने हेतु आर्थिक नीति का सुदृढ़ होना अति आवश्यक है, क्योंकि आर्थिक नीति के सुदृढ़ हुए बिना राष्ट्र के समग्र विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। आचार्य वृहस्पति राष्ट्र की पूर्णता में आस्था रखते थे। उनका विचार था कि, "किसी राष्ट्र की दृढ़ता तभी सम्भव है, जबकि उसकी सीमा में नीहित भूमि की मर्यादा भंग न हो"।

उनका विचार था कि, "पूर्ण व्यवस्था के आधार पर ही आर्थिक व्यवस्था को सुनियोजित किया जाय", किन्तु वे अर्थ व्यवस्था पर राजा का एकाधिकार चाहते थे जैसा कि उन्होंने 'बृहस्पति स्मृति में लिखा भी है कि, "पृथ्वी पावन एवम् उत्तम है। यही कारण है कि प्रजा, पापी (क्षत्रीय) राजा को तो स्वीकार कर लेती है, लेकिन किसी दूसरे व्यक्ति (दूसरी जाति के व्यक्ति) को (शासन शक्ति) नहीं देना चाहती है"।

उनके अनुसार कोष वृद्धि आवश्यक थी। किन्तु इस कोष वृद्धि के लिए वे अधिक कर वसूलने के पक्ष में नहीं थे। उनका विचार था कि, "कोष वृद्धि के लिए जो राजा अधिक कर लेता है, उसके राष्ट्र का विनाश हो जाता हैं और उसकी वृद्धि नहीं होती है"।

उनके अनुसार अर्थ (धन) सम्पूर्ण कियाओं का स्रोत है, यही सम्पूर्ण आर्थिक क्रियाओं का संचालन करने में सक्षम है'। उनका विचार था कि, "अर्थ की प्राप्ति न्यायोचित ढंग से ही होनी

चाहिए"।

महर्षि कामन्दक' और भूगोल की अवधारणा:

आचार्य कामन्दक नीति विषयक होते हुए भी आर्थिक, विचारों के भी ज्ञाता थे। अपने प्रमुख ग्रन्थ 'कामन्दकीय नीति सार' में आर्थिक व्यवस्था से जुड़े सभी पक्षों का वर्णन निहित है। आर्थिक भूगोल से जुड़े भूमि, आय-व्यय, कर श्रमिक, प्राथमिक एवम् चतुर्थक कार्यों का विशेष उल्लेख हुआ है, जो आर्थिक भूगोल के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

आचार्य कामन्दक कहते हैं कि, "यदि भूमि अच्छी है, यानि जितनी ही उपजाऊ होगी, उतनी ही ज्यादा पैदावार होगी जो कि राष्ट्र के विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी होती है"। उनका कहना है कि, "भूमि के द्वारा ही फसलें, खानें एवम् रत्नादि धातुओं की खोज की जाती हैं। इन सभी धातु एवं फसलों से आर्थिक शुद्धता प्राप्त होती है। पृथ्वी पर वन है तो उससे प्राप्त जड़ी-बूटियों आदि से औषधियों का निर्माण होता है तथा वृक्षों से आने वाले आय राष्ट्र की सम्पन्नता और समृद्धि की ओर बढ़ाती है"।

आचार्य कामन्दक धर्म से अर्थ एवम् अर्थ से काम की प्राप्ति के महत्व को वर्णित करते हैं। अतः उन्होंने धर्म पालन पर विशेष बल दिया है। उन्होनें धर्म शास्त्र के साथ-साथ अर्थ शास्त्र को भी अधिक महत्व दिया है। उन्होंने राजा को ही धर्म, अर्थ, काम इन तीनों का अधिकारी बताया है। वो कहते हैं कि, "धर्म के बिना अर्थ का अर्जन एवम् महत्व नहीं रह जाता और न राजा अधिक दिन पृथ्वी का पालन कर सकता है"।

इसी प्रकार भूमि को अधिक से अधिक महत्व देते हुए वह कहते हैं कि, "भूमि के अन्दर विभिन्न प्रकार की धातुएँ एवम् उर्वरा शक्ति निहित है। वे भूमि के अन्दर छुपे तत्वों को खोज करने के पक्ष में थे। तथा उनका विश्वास था कि, राष्ट्र की आर्थिक सम्पन्नता को सुदृढ़ करने का एक मात्र संसाधन भूमि ही हो सकती है"।

उन्होंने विभिन्न प्रकार की विद्याओं का उल्लेख किया है जैसे भूमि, कृषि, वाणिज्य, वार्ता, व्यापार आदि। ये सभी आर्थिक भूगोल का ही एक पक्ष हैं। वर्ण व्यवस्था में वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्णो को उनके कर्मों के अनुसार अलग अलग विभाजन करते हुए सुदृढ़ आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था का वर्णन करते हैं। चारों वर्णनों के माध्यम से अर्थ उपार्जन के लिए चार आश्रमों की आवश्यकता होती है। उन्होंने ब्रह्मचारी को शिक्षावृत्ति से, गृहस्थ को कृषि से, सन्यासी को भिक्षावृति से धन उपार्जन करने की बात कही है। उन्होंने सर्वाधिक महत्त्व गृहस्थ आश्रम को प्रदान किया है और इस प्रकार कृषि पर सर्वाधिक बल दिया है। महर्षि कामन्दक ने अन्य आचार्यों के समान अर्थ को ही समस्त क्रियाओं के संचालन हेतु अभिन्न अंग माना है। उनके अनुसार अर्थ ही मानव के व्यक्तित्व को उचित आकार प्रकार देने में सक्षम है। इस प्रकार कामंदक ने अपने ग्रंथों के माध्यम से आर्थिक भूगोल का विशेष वर्णन किया है और उसके अंतर्गत आने वाले सभी विषयों पर सूक्ष्म विवेचन प्रदान किया है। जो भारतीय संस्कृति, सभ्यता, राजनीति, भूगोल और समाज को एक नई दिशा प्रदान करने में आज भी उतना ही प्रासंगिक हैं जितना कि, अपने पूर्वकाल में था।

आचार्य कौटिल्य और भूगोल विषयक विचार:

आचार्य कौटिल्य एक सर्वोपरि नीतिज्ञ हैं। आचार्य कौटिल्य ने आर्थिक नीतियों का जिस सूक्ष्मता एवम् गहनता से अध्ययन किया है, उतना शायद ही किसी अन्य के द्वारा किया गया हो। उन्होंने जो आर्थिक नीति तत्व निर्धारण किये है उनका प्रयोग आज भी प्रासंगिक है।

आचार्य कौटिल्य द्वारा प्रस्तुत आर्थिक नीतियों एवम् अर्थव्यवस्था सम्बन्धी नियमों एवम् तथ्यों के अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि, वह प्राचीन कालीन एक महान भूगोल वेत्ता थे।

उनका मुख्य ग्रन्थ 'कौटिल्य अर्थशास्त्रम्" कृषि को सर्वाधिक महत्व प्रदान करने वाला शास्त्र है। क्योंकि कृषि ही आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ एवम् सम्पन्नता प्रदान करती है। कृषि से पैदा अन्न तथा उसके अंदर छुपे तत्वों की खोज से उसकी सम्पन्नता अधिक अग्रसर होती है।

कौटिल्य ने कृषि के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के अन्नों की उत्पादन प्रकिया को बताया है जिसमें खाद, सिंचाई एवम् उत्पादन वृद्धि पर विशद प्रकाश डाला गया है। जो आर्थिक भूगोल का ही एक हिस्सा है।

कौटिल्य ने भूमि उपयोग पर विशेष प्रकाश डाला है। उन्होंने भूमि उपयोग को कृषि भूमि, बंजर भूमि, चारागाह भूमि एवं परति भूमि के रूप में विभाजित किया है। उनके अनुसार बंजर भूमि पर अन्न नहीं उत्पन्न होता है उस भूमि को 'भूमि छिद्र' कहते हैं। उन्होंने भूमि को कृषि योग्य बनाने हेतु अनेक प्रकार के उपायों का भी वर्णन किया है। कृषि को एक मुख्य उद्योग के रूप में अभिव्यक्त करते हुए उन्होंने कहा है कि, "कृषि पर राजा का एकाधिकार होता है। जिसके द्वारा राष्ट्र को प्रगति की राह पर लेकर आया जा सकता है।

उनके अनुसार एक किसान को कम से कम कृषि शास्त्र, शुल्क शास्त्र एवं वृक्ष आयुर्वेद आदि की जानकारी होना आवश्यक है। कृषि के साथ साथ आचार्य कौटिल्य ने सिंचाई व्यवस्था पर भी विशेष प्रकाश डाला है। सिंचाई साधनों के रूप में उनके द्वारा तालाब, नहर, कुआँ, नाली आदि का वर्णन किया गया है। उन्होंने सिंचाई के लिए दो प्रकार के बांधों के निर्माण की व्यवस्था को भी अभिव्यक्त किया है।

आर्थिक भूगोल के एक हिस्से पशुपालन की ओर भी आचार्य कौटिल्य ने अपनी दृष्टि डाली है जिसकी व्याख्या करते हुए वह लिखते हैं कि, "जो लोग पशुओं को पालते थे उसे गोपालक कहते हैं"। कृषि उद्योग के बाद दूसरे स्थान पर पशुपालन की व्यवस्था थी। पशुओं को चराने के लिए चारागाह की व्यवस्था थी। साथ ही पशुओं को चराने वाले श्रमिक को भी मजूरी एक निश्चित मात्रा में देने की व्यवस्था थी।

इसी प्रकार कौटिल्य ने अपने ग्रंथ में व्यापार एवं व्यापारिक मार्गों का भी मंथन किया है। उन्होंने राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय दोनों प्रकार के व्यापार पर विशद दृष्टिपात किया है। जिसके महत्वपूर्ण नियमों की व्याख्या उनके ग्रंथ में मिलती है। आचार्य कौटिल्य ने विभिन्न प्रकार के उद्योग धंधों को करने के लिए विभिन्न प्रकार के वर्गों का उल्लेख किया है। जैसे बर्तन निर्माण करने वाले, शिल्प निर्माण करने वाले, व्यापार करने वाले, कृषि करने वाले, टोकरी का निर्माण करने वाले आदि अलग अलग व्यक्ति थे। लेकिन व्यवसाय करने वाले श्रमिकों को उन्होंने दो वर्गों में विभक्त किया है - कुशल श्रमिक एवं अकुशल श्रमिक।

इस प्रकार आचार्य कौटिल्य ने आर्थिक भूगोल के रूप में विभिन्न दिशाओं की ओर दृष्टिपात किया है जिनका अध्ययन कर व्यक्ति अपने लिए नए आयामों का चयन करने में सक्षम हो सकता है।

"आचार्य शुक्र और आर्थिक भूगोल एक विश्लेषणात्मक बिन्दु":

प्राचीन भारतीय नीति शास्त्र के व्याख्याता आचार्य शुक्र आर्थिक नीतियों के प्रतिपादक माने जाते हैं। उन्होनें अपने ग्रन्थों में नीति विषयक ज्ञान के साथ-साथ आर्थिक नियमों का विशिष्ट रूप से विवेचन किया है। आचार्य शुक्र ने राजा के कर्तव्य एवम् उत्तराधिकार के साथ-साथ आर्थिक व्यवस्था को भी समुचित ढंग से वर्णित किया है। उनका प्रमुख ग्रन्थ 'शुक्र नीति' है। इस 'शुक्र नीति में आर्थिक भूगोल से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का विवेचन किया गया है। उन्होंने आर्थिक भूगोल के एक पक्ष के रूप में भूमि से सम्बन्धित सभी कार्य एवं व्यापार तथा वाणिज्य आदि का विशेष रूप से वर्णन प्रस्तुत किया है।

उनके मत में आर्थिक भूगोल का एक मुख्य पक्ष भू-उपयोग है। भूमि एवम् भूमि उपयोग पर आचार्य शुक्र ने विशेष बल दिया है तथा भूमि का आवंटन करने का आधिकार राजा के पास सुरक्षित रखा है। राज़ा को बिना कर दिये दो अंगुल भूमि न देने का आदेश, समुचित कर लेने की व्यवस्था का अधिकार दिया गया है। राजा की आज्ञा से किसानों को उतनी ही भूमि दी जाए जितनी उसकी जीविका के लिए आवश्यक है। भूमि आवंटन के लिए कठोर नियम अपनाएँ गये थे और प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक था कि वह जितनी भूमि कृषि के लिए ले उसका कर राजा को अवश्य दें।

अन्य भूगोलवेत्ताओं के समान ही आचार्य शुक्र का भी मानना यही था कि, कृषि ही राष्ट्र के विकास का प्रमुख साधन है। निश्चित ही पृथ्वी सभी प्रकार के धनों की जननी है। अतः कृषि सबसे उत्तम कार्य है। अन्य वृत्तियाँ उसके बाद आती हैं। जोती गयी पृथ्वी चार भुजाओं के समान होती है। जब भूमि पर प्रजा द्वारा खेती की जाती है तब राजा उसका अधिकारी होता है।

अचानक शुक्र ने सिंचाई व्यवस्था का वर्णन करते हुए सिंचाई के लिए जल की उपलब्धता, राष्ट्र में सिंचाई कैसे की जाए, किस प्रकार राष्ट्र को समृद्धशाली बनाया जाए इन सबका वर्णन किया है।

इसीप्रकार आचार्य शुक्र ने व्यवसाय की ओर भी अपनी दृष्टि डाली है। उन्होंने चौंसठ प्रकार के शिल्पकारों के नाम बताये हैं और उनके वेतन तथा पारिश्रमिक संबंधी नियमों का भी उल्लेख किया है।

आचार्य शुक्र ने देशी विदेशी वस्तुओं के व्यापार का उल्लेख करते हुए व्यापार के नियमों, वस्तुओं की खरीद, बिक्री, उनसे लाभ आदि का विशद वर्णन किया है। उन्होंने अर्थ के

महत्त्व को स्वीकार करते हुए धन अर्जित करने पर बल दिया है।

साथ ही धन एवं विद्या के इच्छुक व्यक्ति को अपना एक पल भी समय नष्ट नहीं करना चाहिए। उन्होंने एक स्थान पर कहा कि, "व्यक्ति को सुंदर पत्नी, दान एवं उपयोग के लिए नित्य धन अर्जित करना चाहिए"।

आचार्य शुक्र ने वर्ण व्यवस्था का वर्णन करते हुए उसके अनुकूल धर्म, अर्थ और काम के अर्जन का वर्णन किया है। और अर्थ उपार्जन के नियमों का भी वर्णन किया है।

आचार्य शुक्र ने 14 विद्याओं में विद्या को भी आर्थिक महत्त्व के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने वार्ता को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। वार्ता विद्या को शुक्र ने आर्थिक एवं सामाजिक जीवन की आधारशिला भी कहा है।

आचार्य शुक्ल ने पुरुषार्थ को समस्त क्रियाओं का आधार माना है और धर्म अर्थ काम इन तीनों को अन्तर्सम्बंधित मान कर इनका पालन करते के नियमों का भी वर्णन किया इस प्रकार आचार्य शुक्र ने राष्ट्र को विकसित करने राष्ट्र के प्रमुख आय के स्रोत कृषि व्यवस्था को सुदृढ़ बनाए रखने, व्यापार आदि के सतत विकास आदि के नियमों का वर्णन करते हुए आर्थिक भूगोल के पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत किए जिन्हें अध्ययन उपरान्त यह कहा जा सकता है कि आचार्य शुक्र के एक महान प्राचीन आर्थिक भूगोल वित्त थे।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि, प्राचीन भारतीय साहित्य में अनेक ऐसे भूगोलवेत्ता रहे हैं जिन्होंने सृष्टि में व्याप्त भौगोलिक ज्ञान के सूक्ष्म स्वरूप को लिपिबद्ध कर संपूर्ण मानव सभ्यता को ज्ञान के विभिन्न रूपों से जोड़ा है। इससे यह भी निश्चित होता है कि, महर्षि पाणिनी, वाल्मीकि, कालिदास, मनु, पतंजलि आदि भी ऐसे ही कुशल आर्थिक भूगोल वेत्ता थे जिन्होंने अपने साहित्य में भौगोलिक ज्ञान की बारीकियों को अवतरित किया है। कौटिल्य आदि के सामान इन सभी ने कृषि, पशुपालन पर बल डाला और आर्थिक संपन्नता को बढ़ाने की बात कही। ये सभी भली प्रकार से जानते थे कि, भारत भूमि सोने की चिड़िया है जो उसके गर्भ में विद्यमान अर्थ और भूगोल के घनिष्ठ संबंध से युक्त होकर ही इस रूप को प्राप्त हो सकती है।

REFERENCES

1. जैन, डॉ० कैलाश - "प्राचीन भारतीय सामाजिक एवम् आर्थिक संस्थाएँ", 1971.

2. लाहा, विमन चरण एवम् द्विवेदी रामकृष्ण – "प्राचीन भारत का एतिहासिक भूगोल", 1972.

3. टोजर, एच० एफ० – "ए हिस्ट्री ऑफ एंशिएंट ज्योग्राफी", 1975.

4. उपाध्याय, डॉ० भरत सिंह - "बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल",1991.

5. त्रिपाठी, माया प्रसाद "डेवलपमेन्ट ऑफ ज्योग्राफिकल नोलेज इन ऐशिएट इण्डिया" 1995.

6. प्रो०, इन्द्र - "कौटिल्य अर्थ शास्त्र", 1998.

7. सक्सेना, डी० डी० पी० - "रिजिनल ज्योग्राफिकल ऑफ वैदिक इण्डिया", 1999.